bdkbl 36 Ukk[ku D;k c<rs g\ % fo'y"k.k vkj eY;kdu

bdkbl dh :ij[kk

36.0 उद्देश्य
36.1 प्रस्तावना
36.2 अंतर्वस्तु
  36.2.1 विचार पक्ष
  36.2.2 भाव पक्ष
36.3 लेखकीय व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति
36.4 संरचना-शिल्प
  36.4.1 भाषा
  36.4.2 शैली
36.5 प्रतिपाद्य
36.6 सारांश
36.7 शब्दावली
36.8 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

36-0 mÌs';

आप इस इकाई में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' की रचनागत विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- निबंध की विषयवस्तु का विश्लेषण कर सकेंगे। उक्त विश्लेषण के आधार पर इस निबंध के भाव पक्ष और विचार पक्ष की विशेषताएं बता सकेंगे;
- निबंध पर लेखकीय व्यक्तित्व के प्रभाव का विवेचन कर सकेंगे;
- निबंध की भाषागत और शैलीगत विशेषताओं का उल्लेख कर सकेंगे; और
- निबंध के प्रतिपाद्य का विश्लेषण कर सकेंगे।

36-1 iLrkouk

आपने इकाई 35 में आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' का वाचन किया था। निबंध के साथ उसके कुछ महत्त्वपूर्ण अंशों की व्याख्या का भी आपने अध्ययन किया था। अब आप इस निबंध के रचनागत वैशिष्ट्य का अध्ययन करेंगे। इसके लिए हम निबंध का विश्लेषण करेंगे। निबंध के विश्लेषण का हमारा आधार वही होगा, जो 'स्वर्ग में विचारसभा का अधिवेशन' निबंध में रहा है। इस इकाई में हमारी कोशिश होगी कि निबंध की विशेषताओं को पहचानने के लिए विश्लेषण में आपका सक्रिय योगदान हो। इसलिए हम अपनी ओर से पूरा विश्लेषण करने की बजाय उसके लिए आवश्यक संकेत सूत्र देंगे तथा उस विधि का परिचय देंगे जिसकी मदद लेकर आप स्वयं विश्लेषण कर सकें और सही निष्कर्ष निकाल सकें। विश्लेषण की आपकी क्षमता को और बढ़ाने के लिए हम बोध प्रश्न और अभ्यास भी देंगे।

36-2 vrroLrq

हम आपको पहले बता चुके हैं कि निबंध में अंतर्वस्तु के दो पक्ष होते हैंः भाव पक्ष और विचार पक्ष। किसी निबंध में विचारों की प्रधानता होती है, किसी में भावों की। ऐसे भी निबंध हो सकते हैं जिनमें विचार और भाव एक-दूसरे से गुंथे हुए हों और निबंध हमारी भावनाओं और विचारों दोनों को उत्तेजित करे। अगर हम इस निबंध की अंतर्वस्तु पर विचार करें, तो हमें यह समझने में कोई कठिनाई नहीं होगी कि यह निबंध 'स्वर्ग में विचारसभा का अधिवेशन' से भिन्न प्रकार का है। लेकिन यह भिन्नता किस दृष्टि से है? अंतर्वस्तु पर विचार करते हुए हम इस भिन्नता को जानने और समझने का प्रयास करेंगे।

सबसे पहले आप इस बात पर विचार करें कि इस निबंध का विषय क्या है? निबंध को पढ़ने से हमें यह समझने में कोई परेशानी नहीं होती कि निबंध का विषय नाखून क्यों बढ़ते हैं पर विचार करना नहीं है बल्कि नाखून के बढ़ने की प्रवृत्ति के माध्यम से कुछ अधिक महत्त्वपूर्ण

सवालों पर विचार करना है। ये महत्त्वपूर्ण सवाल कौन-से हैं और उन पर लेखक ने एक भाववादी की तरह विचार किया है या एक बुद्धिवादी की तरह यह जानना भी है। दूसरे, यह निबंध हमें सोचने के लिए प्रेरित करता है या मात्र हमारे भावों को ही उद्वेलित करता है? इन सभी पक्षों का विवेचन करने के लिए आइए, पहले निबंध के विचार पक्ष को समझने का प्रयास करें।

36-2-1 fopkj i{k

द्विवेदीजी के इस निबंध की शुरुआत बच्चे की जिज्ञासा या एक प्रश्न से होती है। ''नाखून क्यों बढ़ते हैं?'' यह प्रश्न बच्चे द्वारा पूछा गया सामान्य सा प्रश्न नहीं रहता, जब लेखक इस प्रश्न में अंतर्निहित उसके व्यापक अर्थ को खोलता है। हम सभी जानते हैं कि नाखूनों का आज ऐसा कोई उपयोग नहीं है जो उसके होने की अपरिहार्यता को सिद्ध करे। लेकिन मानव इतिहास में एक समय ऐसा भी रहा होगा जब मनुष्यों को इन नाखूनों की जरूरत थी। हम जानते हैं कि कई जंगली जानवर शिकार के लिए नाखूनों और दांतों का इस्तेमाल करते हैं। अपनी बर्बर अवस्था में जब मनुष्य बनमानुस की तरह रहा होगा, तब अपनी रक्षा और शिकार के लिए दांतों और नाखूनों का इस्तेमाल भी करता होगा। लेकिन आज नाखूनों का ऐसा कोई उपयोग बाकी नहीं रहा है। फिर भी, नाखून बढ़ते जाते हैं। आज नाखून को बढ़ाना अच्छा नहीं माना जाता, इसलिए मनुष्य बढ़े हुए नाखूनों को काटता है। शायद इसलिए कि बढ़े हुए नाखून असभ्यता और जंगलीपन की निशानी है।

ekuo izxfr vkSj gfFk;kjksa dk fodkl % इस बिंदु पर आकर द्विवेदीजी एक नया प्रश्न उठाते हैं। अगर मनुष्य सचमुच बर्बरता के चिह्नों से छुटकारा पाना चाहता है तो फिर वह हथियारों का निर्माण क्यों कर रहा है? किसी जमाने में मनुष्य अपनी रक्षा के लिए नख और दांत का प्रयोग करता था। फिर, पत्थर, लकड़ी और हड्डियों का इस्तेमाल करने लगा। लोहे के हथियार बने, बारूद का आविष्कार हुआ और अब एटम बम का युग है। हथियारों के इस विकास को देखें तो हम समझ सकते हैं कि मनुष्य अधिक से अधिक विध्वंसक हथियार बनाने की ओर बढ़ रहा है। हिरोशिमा और नागासाकी का उदाहरण हमारे सामने हैं जहां एटम बमों ने लगभग दो लाख लोगों को कुछ ही मिनटों में लाश में बदल दिया था। तब कैसे कह सकते हैं कि मनुष्य सचमुच बर्बरता से मुक्त होना चाहता है?

द्विवेदीजी अपने निबंध की शुरुआत में ही एक सामान्य बाल जिज्ञासा को संपूर्ण मानवजाति से जुड़े प्रश्न से जोड़ देते हैं। आप देखेंगे कि यह तरीका शुक्लजी से अलग है। शुक्लजी जिस समस्या पर अपना निबंध लिखते हैं उसको शुरू में ही स्पष्ट रूप से रख देते हैं और फिर उसके एक-एक पक्ष का विवेचन करते जाते हैं और तब निष्कर्ष तक पहुंचते हैं। लेकिन द्विवेदीजी अपने विषय को एक साथ नहीं खोलते, उसे धीरे-धीरे खोलते हैं। ऊपर, जिस विचार बिंदु तक हम पहुंचे हैं, वहां यह नहीं जान सकते कि निबंध की अंतर्वस्तु आगे किस दिशा की ओर मुड़ेगी। इस दृष्टि से द्विवेदीजी की पद्धति काफी स्वतंत्र है। वे अपने निबंध में विचारों को कोई तार्किक क्रम देने या ऊपरी तौर पर उनमें एकता और संगति लाने का प्रयास नहीं करते; यद्यपि उसमें विचारों की आंतरिक एकता और तार्किक संगति हमेशा बनी रहती है। द्विवेदीजी के निबंधों में विचारों को उत्तेजित करने के लिए पर्याप्त सामग्री उपलब्ध रहती है। इस दृष्टि से देखें तो इस निबंध में निम्नलिखित बिंदुओं पर गंभीरता से विचार किया गया है :

- मानव प्रगति और हथियारों का विकास
- विलास वृत्ति का उदात्तीकरण
- मनुष्य की अभ्यास-जन्य सहज वृत्तियां
- स्व का बंधन : भारतीय संस्कृति की विशेषता
- नये और पुराने का प्रश्न
- मनुष्य और पशु में अंतर : सामान्य धर्म की खोज
- भौतिक उन्नति और मनुष्यता का मार्ग

ये सभी विचार बिंदु जिस एक लक्ष्य से प्रेरित है, वह है विश्व शांति का प्रश्न। लेकिन अपने आप में भी ऊपर के सभी प्रश्न अत्यंत गंभीर विवेचन की मांग करते हैं जो एक छोटे से निबंध में संभव नहीं है इसलिए द्विवेदीजी एक अन्य मार्ग अपनाते हैं। वे प्रत्येक प्रश्न का गंभीर विवेचन करने की बजाय उसके मूल मंतव्य को पकड़ते हैं और उसे अत्यंत प्रभावशाली रूप में रख देते हैं। उदाहरण के लिए, नाखूनों को सजाने संवारने के पक्ष को लें। इसका, निबंध के मूल मंतव्य

से सीधा संबंध नहीं है। मूल मंतव्य मनुष्य की पाशविक वृत्ति को उजागर करना और उसके वास्तविक धर्म की पहचान कराना है।

foykl o`fÙk dk mnkÙkhdj.k% द्विवेदीजी निबंध में हमें यह जानकारी देते हैं कि आज से दो हजार साल पहले भारत में नाखूनों को सजाने संवारने की कला का विकास भी हुआ था। स्पष्ट है कि नाखूनों के जिस उपयोग का यहां संकेत दिया गया है उसका संबंध मनुष्य की विलास वृत्ति से रहा है। लेकिन द्विवेदीजी इस तरह की प्रवृत्ति के सकारात्मक पक्ष को भी हमारे सामने रखते हैं, जब वे कहते हैं कि 'समस्त अधोगामिनी वृत्तियों को और नीचे खींचने वाली वस्तुओं को भारतवर्ष ने मनुष्योचित बनाया है।' द्विवेदीजी के कहने का तात्पर्य यह है कि वे वस्तुएं जो मनुष्य को पतन की ओर ढकेलती हैं उनको भी भारतीय परंपरा ने कला का रूप देकर मनुष्यत्व के अनुकूल बनाने का प्रयास किया है। नाखूनों का यह संदर्भ इस निबंध के मूल कथ्य से सीधा जुड़ा नहीं है किंतु द्विवेदीजी की यह विशेषता है कि वे असंबद्ध बातों में भी एक तार्किक संगति उत्पन्न कर देते हैं।

euq"; dh vH;kltU; lgt o`fÙk;k¡% द्विवेदीजी ने इस निबंध में मुख्य प्रश्न यह उठाया है कि मनुष्य पशुता से मुक्त क्यों नहीं हो पा रहा है? नाखून के बढ़ने को वे पशुता मानते हैं और हथियारों के निर्माण को भी। इस प्रश्न पर अपने चिंतन को आगे बढ़ाते हुए वे प्राणी विज्ञान के एक सिद्धांत का सहारा लेते हैं। प्राणी विज्ञान के अनुसार मनुष्य के शरीर में कुछ ऐसी अभ्यासजन्य वृत्तियां हैं जिन्हें उसे न सीखना होता है और न जिनके लिए उसे अलग से कोई प्रयास करना पड़ता है। जैसे केशों का बढ़ना, नाखूनों का बढ़ना, पलकों का उठना-गिरना आदि। इनमें से कुछ ऐसी वृत्तियां भी है जिनकी अब सभ्यता के विकास के साथ आवश्यकता नहीं है लेकिन लाखों वर्षों के अभ्यास के कारण वे वृत्तियां अब भी सक्रिय हैं। किसी समय शारीरिक और रक्षात्मक आवश्यकता ने उन वृत्तियों को उत्पन्न किया होगा। इन्हें ही द्विवेदीजी ने अनजान की स्मृतियाँ कहा है। नाखून का बढ़ना ऐसी ही सहजात वृत्ति है जो उस अवस्था की द्योतक है जब मनुष्य बर्बर अवस्था में रहता था। मनुष्य इस बात को आज भूल गया है कि नाखूनों का बढ़ना उसी पशुत्व का प्रमाण है। बाहरी तौर पर वह पशुत्व को छोड़ चुका है लेकिन पशुत्व का चिह्न अब भी विद्यमान है जिसे वह बढ़ने पर काट देता है।

लेकिन क्या मनुष्य ने सचमुच मनुष्यता को अपना लिया है? इस प्रश्न का उत्तर है ''नहीं''। क्योंकि मनुष्य नाखून भले ही काट रहा हो लेकिन हथियारों को तो लगातार बढ़ा ही रहा है। तब मार्ग कौन-सा है?

अब तक द्विवेदीजी ने अपने निबंध के विषय की समस्या प्रस्तुत की थी, देखना यह है कि वे उसका क्या समाधान हमारे सामने रखते हैं?

Lo dk c/ku% Hkkjrh; laLÑfr dh fo'ks"krk% समस्या की ही तरह वे समाधान के प्रश्न को भी सीधे रूप में नहीं रखते। वे अपनी चर्चा की शुरुआत अंग्रेजी के एक शब्द ''इंडिपेंडेंस'' के भारतीय पर्याय से करते हैं। ''इंडिपेंडेंस'' का अर्थ है अनधीनता। अनधीनता का आशय है ''किसी की अधीनता का अभाव'। लेकिन भारतीय पर्याय यह नहीं है। भारतीय पर्याय है, स्वाधीनता या स्वतंत्रता अर्थात स्व की अधीनता या स्व का तंत्र। इस प्रकार इसमें किसी की अधीनता का अभाव नहीं बल्कि 'स्व' की अधीनता का भाव निहित है। इसे द्विवेदीजी भारतीय संस्कृति की विशेषता मानते हैं।

u;s ;k iqjkus dk iz'u% यहां एक शंका खड़ी हो सकती है कि क्या द्विवेदीजी भारतीय परंपरा का महिमा मंडन कर रहे हैं? निश्चय ही नहीं। द्विवेदीजी कालिदास के मत का उल्लेख करते हुए स्पष्ट कर देते हैं कि उनकी दृष्टि पुरातनपंथियों जैसी नहीं है। लेकिन उनका मानना है कि अगर हमारे अतीत के कोष में मानव जाति की भलाई की कोई बात हो तो हमें उसे अवश्य स्वीकार करना चाहिए।

euq"; vkj i'kq esa varj & lkekU; /keZ dh [kkst% आचार्य द्विवेदी इसके बाद मानव जाति के लिए सामान्य धर्म की बात को उठाते हैं। आखिर मनुष्य और पशु में मूल अंतर क्या है? भारतीय परंपरा में आहार, निद्रा, भय और मैथुन ये चार बातें ऐसी मानी गयी हैं जो मनुष्य और पशु में एक समान है। स्पष्ट ही इन चार बातों के होने मात्र से कोई मनुष्य, मनुष्य कहलाने का अधिकारी नहीं बन जाता। तब वह क्या चीज है जो मनुष्य को मनुष्य बनाती है? यहां

द्विवेदीजी उस सामान्य धर्म की बात करते हैं जिसे स्वयं मनुष्य ने खोजा है और जिसे मनुष्य ने अपने ऊपर बंधन के तौर पर स्वीकार किया है। संयम, श्रद्धा, तप, त्याग और दूसरों के दुख-सुख के प्रति संवेदना। निश्चय ही ये ऐसे धर्म हैं जिन्हें स्वीकार करने के लिए मनुष्य बाध्य नहीं है लेकिन जिन्हें स्वीकार करके मनुष्य, मनुष्य कहलाने का अधिकारी बनता है।

Hkkfrd mUufr vkSj eu"; rk dk ekxZ % इनकी आवश्यकता आज क्यों है? क्योंकि भौतिक उन्नति इस बात की गारंटी नहीं है कि मनुष्य पशुत्व से मुक्त हो जाएगा। हथियार इसी भौतिक उन्नति का अंग है जिससे केवल विध्वंस और विनाश ही हो सकता है। लेकिन क्या मनुष्य का लक्ष्य विनाश है? महात्मा गांधी ने सावधान किया था कि सिर्फ भौतिक उन्नति से सुख और शांति नहीं मिलेगी। अपने मन को भी बदलना होगा। मन से हिंसा, क्रोध, द्वेष और असत्य को दूर करना और दूसरों के लिए जीना सीखना होगा, दूसरों के लिए कष्ट सहन करना होगा। गांधीजी ने ये बातें एक उपदेशक की तरह नहीं कही थी वरन् अपने व्यवहार को भी उन्हीं के अनुकूल ढाल लिया था। लेकिन जिन लोगों के मन में हिंसा थी, द्वेष था, क्रोध और बैर का भाव था, उन्हें उनकी बातें अच्छी नहीं लगीं और उन्होंने गांधीजी की हत्या कर दी।

द्विवेदीजी कहते हैं कि हो सकता है किसी दिन नाखून बढ़ना बंद हो जाएं क्योंकि जो हमारे लिए गैर जरूरी है प्रकृति उसे हमसे अलग कर देती है – जैसे पूंछ। हो सकता है किसी दिन मनुष्य विध्वंसकारी अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण बंद कर दे। लेकिन जब तक ऐसा नहीं होता है तब तक हमें बच्चों को सिखाना होगा कि नाखून का बढ़ना पशुता की निशानी है और उसको बढ़ने देना मनुष्य का आदर्श नहीं है। इसी तरह हथियारों की बढ़ोतरी हमारी पशुता की निशानी है और उनको कम करने की इच्छा रखना हमारी मनुष्यता का प्रमाण है। हमें अपने मनुष्य होने की पहचान को नहीं भूलना चाहिए।

मानवजाति की सार्थकता विनाशकारी हथियारों का ढेर लगाने में नहीं है। मनुष्य जीवन की सार्थकता इस बात में है कि वह प्रेम, मैत्री और त्याग के मार्ग पर चले तथा सब के कल्याण के लिए अपने को समर्पित कर दे। नाखून के बढ़ने की तरह हिंसक वृत्ति भले ही मनुष्य की सहज वृत्ति का परिणाम हो, लेकिन उससे मुक्त होने की कोशिश करना भी मनुष्यत्व की पहचान है।

इस प्रकार द्विवेदीजी नाखून बढ़ने के सवाल से मनुष्य की हिंसक वृत्ति को जोड़ते हैं और हिंसक वृत्ति के सवाल को हथियारों की बढ़ोतरी से। हथियारों में वृद्धि होने से मानवजाति के संपूर्ण विनाश का खतरा उत्पन्न हो गया है। प्रश्न यह है कि इससे मुक्त कैसे हों? द्विवेदीजी इसके लिए आत्मनियंत्रण का मार्ग सुझाते हैं जो भारतीय परंपरा की देन है और जिसके द्वारा ही मनुष्य अपने अंदर की पशुता से मुक्त हो सकता है। अतः हम कह सकते हैं कि यह निबंध हमें विश्व-शांति के महत्त्व पर विचार करने के लिए प्रेरित करता है।

36-2-2 Hkko i{k

'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' पर विचार करने के दौरान हमने देखा कि द्विवेदीजी ने इससे जुड़े कई सवालों पर गहन चिंतन से निकले निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। इस निबंध का मूल प्रश्न केवल वैचारिक नहीं है, वह मनुष्य की भावनाओं का भी सवाल है। नाखून बढ़ना भले ही शारीरिक क्रिया हो, लेकिन पशुता और मनुष्यता, मनुष्य के आंतरिक भाव हैं। द्विवेदीजी की मुख्य चिंता मनुष्य की मनोवृत्तियों को लेकर रही है। मनुष्य में दो तरह की वृत्तियां होती हैं। एक ओर क्रोध, बैर, द्वेष हैं जो मनुष्य में घृणा और नफ़रत पैदा करते हैं जिनके कारण लोगों में लड़ाई-झगड़ा बढ़ता है। यही प्रवृत्ति जब विभिन्न समुदायों, जातियों और राष्ट्रों के बीच बढ़ती है तो उनमें युद्ध होता है। इन युद्धों में हजारों-लाखों निर्दोष लोग मारे जाते हैं। हिंसा और घृणा मनुष्य को ऐसे हथियारों की ओर ले जाती हैं जिनसे और अधिक नरसंहार होता है। आखिर क्या यह सत्य नहीं है कि आज अस्त्र-शस्त्रों की होड़ ने मानव-जाति को ऐसे कगार पर ला खड़ा कर दिया है जहां एक कदम आगे बढ़ाने पर ही मानव-जाति संपूर्ण विनाश की ओर बढ़ सकती है।

तब प्रश्न यह है कि इस खतरे से कैसे बचा जाए? द्विवेदीजी इसका उत्तर विचारधारात्मक स्तर पर नहीं देते। वे इसका उत्तर भी भावनाओं के धरातल पर देते हैं। उनका विचार है कि अगर क्रोध, हिंसा, घृणा और पाशविक वृत्तियां मनुष्य में मौजूद हैं तो सभ्यता के विकास के साथ मनुष्य ने कुछ ऐसी भावनाओं और धारणाओं को भी अंगीकार किया है जिनसे वह अपनी

पाशविकता पर विजय प्राप्त कर सके। दूसरों के सुख-दुख के प्रति संवेदना का भाव, प्रेम का भाव, दूसरों के लिए कष्ट उठाना – ये ऐसी चीज़ें हैं जिनसे व्यक्ति घृणा, क्रोध, हिंसा जैसी वृत्तियों पर विजय पा सकता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इस निबंध में वस्तुतः दो भिन्न तरह की भावधाराओं का संघर्ष दिखाया गया है जिन्हें आज की हमारी सभ्यता के मूल में निहित माना जा सकता है। इसलिए हम यह भी कह सकते हैं कि द्विवेदीजी के सामने हथियारों के बढ़ते खतरे की चिंता जितनी प्रबल थी, उससे कहीं अधिक प्रबल थी मनुष्य की पशुता की जो मनुष्य की आंतरिक वृत्ति है। इसके कारण क्रोध, घृणा, वैर आदि नकारात्मक भाव उत्पन्न होते हैं और जिनके कारण ही मनुष्य हथियारों की ओर दौड़ता है।

अब प्रश्न उठता है कि द्विवेदीजी अपने निबंध में प्रधानता किस को देते हैं, विचारों को या भावों को। इसका उत्तर देना सरल नहीं है। वस्तुतः द्विवेदीजी की पद्धति विचारप्रधान नहीं है, लेकिन वह पूरी तरह भावों में भी नहीं बहते। वरन् देखा यह गया है कि जब वे भावनाओं में गहरे डूबे नजर आते हैं तब भी उसमें कोई गहरा विचार अंतर्निहित होता है और जब वे किसी विचार का विवेचन कर रहे होते हैं तो वहां भी कोई मानवीय भाव उस विचार को शक्ति दे रहा होता है। इसके लिए हम निम्नलिखित उदाहरण दे सकते हैं :

> *मेरा मन पूछता है – किस ओर? मनुष्य किस ओर बढ़ रहा है। पशुता की ओर या मनुष्यता की ओर? अस्त्र बढ़ाने की ओर या अस्त्र काटने की ओर। मेरी निर्बोध बालिका ने मानो मनुष्य-जाति से ही प्रश्न किया है – जानते हो, नाखून क्यों बढ़ते हैं? यह हमारी पशुता के अवशेष हैं। मैं भी पूछता हूँ – जानते हो, ये अस्त्र-शस्त्र क्यों बढ़ रहे है? ये हमारी पशुता की निशानी है।*

उपर्युक्त उद्धरण में आप पाएंगे कि लेखक अपनी बात को भावात्मक ढंग से रख रहा है, लेकिन इसमें अंतनिर्हित प्रश्न हमारे विचारों को भी उद्वेलित करने वाला है। इसलिए, अंत में, यह कहा जा सकता है कि द्विवेदीजी के इस निबंध में विचार और भावना दोनों एक दूसरे से इस तरह संयोजित हैं कि इसे हम सिर्फ विचार प्रधान या भाव प्रधान निबंध नहीं कह सकते।

ck/k i'u

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए और अपने उत्तर इकाई के अंत में दिये गए उत्तरों से मिलाइए।

1. निबंध में निम्नलिखित में से किन-किन बातों पर विचार किया गया है। सही पर (√) का चिह्न लगाइए।
   - क) मानव प्रगति और हथियारों का विकास ( )
   - ख) राष्ट्र की सुरक्षा का प्रश्न ( )
   - ग) नये और पुराने का प्रश्न ( )
   - घ) मानवता और पशुता में अंतर ( )
   - ङ) मोक्ष प्राप्ति का मार्ग ( )
2. निबंध में किस मुख्य समस्या पर विचार किया गया है?
   - क) नाखून का बढ़ना
   - ख) भौतिक उन्नति को रोकना
   - ग) मनुष्य की आंतरिक पशुता को समाप्त करना
   - घ) गांधीवाद का प्रचार करना ( )
3. मनुष्यता का मार्ग कौन-सा है?
   - क) भौतिक उन्नति करना
   - ख) दूसरों के लिए कष्ट सहन करना
   - ग) अस्त्र-शस्त्र बढ़ाना
   - घ) नाखून काटना ( )
4. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक पंक्ति में दीजिए:
   1) ''स्व का बंधन'' का क्या आशय है?

      .....

      .....

2) सहज वृत्ति किसे कहते हैं?

....

3) कौन-कौन सी बातें मनुष्य और पशु में समान हैं?

....

4) हथियारों की बढ़ोतरी को रोकना क्यों आवश्यक है?

....

vH;kl

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. प्रस्तुत निबंध विचार प्रधान है या भाव प्रधान? पांच पंक्तियों में अपना मत प्रस्तुत कीजिए।

   mŸkj ladsr%

   विचार प्रधान निबंध की विशेषता ....

   भाव प्रधान निबंध की विशेषता ....

   द्विवेदीजी के निबंध में विचारों और भावों में संतुलन ....

2. निम्नलिखित अंश के आधार पर निबंध के भाव पक्ष का विवेचन अधिक-से-अधिक 100 शब्दों में कीजिए।

   एक बूढ़ा था। उसने कहा था – बाहर नहीं, भीतर की ओर देखो। हिंसा को मन से दूर करो, मिथ्या को हटाओ। क्रोध और द्वेष को दूर करो, लोक के लिए कष्ट सहो, आराम की बात मत सोचो, प्रेम की बात सोचो, आत्म-तोषण की बात सोचो, काम करने की बात सोचो।

   mŸkj ladsr %

   बात कहने का भावपरक और आत्मीय तरीका

   विवेचनपरकता से भिन्न

   पाठक की भावनाओं को उद्धेलित करने का प्रयास

   छोटे-छोटे वाक्य जिसमें बात के भाव पक्ष पर बल

   ....

   ....

   ....

   ....

36-3 ys[kdh; O;fDrRo dh vfHkO;fDRk

निबंध में लेखक का व्यक्तित्व किसी-न-किसी रूप में अवश्य व्यक्त होता है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की शैली शुक्लजी की अपेक्षा कम विवेचनपरक और अधिक भावनात्मक है इसलिए उनके व्यक्तित्व की विशेषताओं को ज्यादा सरलता से पहचाना जा सकता है। यद्यपि इन दोनों रचनाकारों के व्यक्तित्व की कुछ विशेषताएं एक-सी हैं। द्विवेदीजी के इस निबंध को पढ़ने से उनके व्यक्तित्व की जो विशेषताएं हमारे सामने उभरकर आती हैं, उन्हीं पर यहां विचार किया जाएगा।

ekuorkoknh % आचार्य द्विवेदी का दृष्टिकोण मानवतावादी है, उनकी इस दृष्टि को हम इस निबंध में भी पहचान सकते हैं। द्विवेदीजी को यह निबंध लिखने की क्यों आवश्यकता हुई, अगर इस पर विचार करें तो हम पाएंगे कि इसके पीछे मानव-जाति के भविष्य की चिंता ही मुख्य कारण है। द्विवेदीजी के लिए ऐसा विश्व ही आदर्श है जो सुख-शांति और प्रेम की भावना से भरा हो। जहां लोग क्रोध, घृणा और असत्य से मुक्त होकर जिएं। लेकिन उनके आदर्शों का यह संसार वास्तविकता में मौजूद नहीं है। जो है – वह विनाश के कगार पर खड़ा है क्योंकि मनुष्य ने ऐसे अस्त्र-शस्त्र निर्मित कर लिए हैं कि उससे संपूर्ण मानव जाति का विनाश हो सकता है। यही मुख्य चिंता है जिसने द्विवेदीजी को इस निबंध की रचना के लिए प्रेरित किया है।

आचार्य द्विवेदी अपनी चिंता को सिर्फ हथियारों की बढ़ोतरी तक ही सीमित नहीं रखते। उनका मानना है कि केवल हथियारों की कमी की बात करना पर्याप्त नहीं है। आवश्यकता इस बात

की है कि हम उस मूल कारण को पहचानें जो इंसान को हथियारों के निर्माण की ओर ले जाती है। द्विवेदीजी की विशेषता यह है कि वे मनुष्य की आंतरिक वृत्तियों के प्रकाश में इस पर विचार करते हैं और बताते हैं कि इस समस्या का संबंध उन पाशविक वृत्तियों से है जिनसे अभी तक मनुष्य मुक्त नहीं हो पाया है। लेकिन ये पाशविक वृत्तियां मनुष्य के लिए जितनी सच है उससे कहीं ज्यादा सच है मनुष्य का धर्म। प्रेम, तप, श्रद्धा, संवेदना, त्याग मानवीय गुण या धर्म है, जिनके द्वारा मनुष्य अपने मनुष्यत्व का प्रमाण देता है। मनुष्य जब इन्हें ही भूल जाता है तब वह पशुता की ओर बढ़ने लगता है और तभी वह अस्त्र-शस्त्र का जखीरा बढ़ाता है।

पांडित्य : द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की दूसरी प्रमुख विशेषता है उनका पांडित्य। हम आपको इकाई 35 में बता चुके हैं कि द्विवेदीजी ने प्राचीन भारतीय साहित्य का गहन अध्ययन किया था। उनकी यह अध्ययनशीलता हमें इस निबंध में भी दिखाई देती है। निबंध के आरंभ में ही राम, दधीचि मुनि, आर्यों का आगमन, सुर-असुर संग्राम, कामसूत्र, कालिदास, महाभारत, गौतम आदि के उल्लेख उनके प्राचीन भारतीय इतिहास, साहित्य और संस्कृति से गहरे परिचय को ही प्रकट करते हैं। द्विवेदीजी के पांडित्य की विशेषता यह है कि वे अपने निबंध को अपनी विद्वता से क्लिष्ट और बोझिल नहीं होने देते और न ही अपने पांडित्य से वे दूसरों को आंतकित करते हैं। प्राचीन परंपरा के ये उल्लेख उनके निबंध की अंतर्वस्तु के साथ पूरी तरह रचे-बसे हैं। जैसे दधीचि मुनि का उल्लेख हथियारों के विकास को प्रकट करता है। 'कामसूत्र' नाखूनों के उपयोग की सौंदर्य संबंधी जानकारी प्रदान करता है। कालिदास नये-पुराने के दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हैं, तो महाभारत और गौतम मानवीय धर्म की व्याख्या करते हैं। ये पक्ष निबंध की विषयवस्तु को समृद्ध ही करते हैं।

द्विवेदीजी के पांडित्य की दूसरी विशेषता यह है कि प्राचीन साहित्य और संस्कृति का यह गहरा अध्ययन उन्हें रूढ़िवादी और दकियानूसी नहीं बनाता। उनके सोच में वैज्ञानिक दृष्टि अंतर्निहित है। उदाहरण के लिए, उनका पूरा निबंध विज्ञान की इस मान्यता पर टिका हुआ है कि मनुष्य पहले बर्बर अवस्था में था और धीरे-धीरे विकास करता हुआ आज की स्थिति में पहुंचा है। जबकि धार्मिक मान्यता यह है कि यह सृष्टि ईश्वर की इच्छा से उत्पन्न हुई है। इसी तरह, वे अपनी बात की व्याख्या के लिए सिर्फ प्राचीन साहित्य का सहारा नहीं लेते बल्कि प्राणी विज्ञान और मनोविज्ञान की मान्यताओं का भी सहारा लेते हैं और अपने मत को उनसे पुष्ट करते हैं। इस प्रकार द्विवेदीजी के पांडित्य का आधुनिकता या पुरातनता से कोई विरोध नहीं है बल्कि उनका तो मत है कि जहां भी जो बात अच्छी हो उसे अंगीकार करना चाहिए।

विचारक : द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की तीसरी विशेषता है कि उनकी विचारशीलता। वे किसी भी प्रश्न पर गहरी अंतर्दृष्टि के साथ विचार करते हैं। यद्यपि उनका उद्देश्य पाठकों को अपनी विचार प्रणाली से प्रभावित करने का नहीं होता। वे उस मूल चिंता से पाठक को जोड़ना चाहते हैं जो उनके निबंध की रचना का आधारभूत कारण है। इस तरह वे अपने पाठक को अपनी चिंता का सहभागी बनाते हैं। द्विवेदीजी के चिंतन की खास बात यह है कि वे अपनी बात को प्रायः सामान्य अनुभव से शुरू करते हैं। उस सामान्य अनुभव को वे ज्यादा व्यापक और बृहत्तर जीवन से जुड़े सवालों से सहज ही जोड़ देते हैं। जैसे इस निबंध में नाखून का बढ़ना, नाखून का हथियार की तरह इस्तेमाल का उल्लेख करते हुए एटम बम तक के निर्माण तक पहुंच जाना। इसी तरह नाखून का बढ़ना और काटना क्रमशः मनुष्य की पशुता और मनुष्यता के प्रतीक बन जाते हैं। इस प्रकार, द्विवेदीजी नाखून बढ़ने के सामान्य अनुभव को हथियारों की बढ़ोतरी से जोड़कर मानवजाति की सामान्य चिंता, विश्व शांति के प्रश्न को अनायास ही प्रभावशाली ढंग से सामने ले आते हैं।

संवेदनशील साहित्यदृष्टा : द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की एक अन्य महत्त्वपूर्ण विशेषता उनकी संवेदनशीलता है। वे चिंतक से अधिक सृजनशील साहित्यकार थे। उनकी संवेदनशीलता जहां व्यापक मानवीय सहानुभूति के रूप में व्यक्त हुई हैं वहीं उनकी सृजनशीलता ने उनके निबंधों को सरस, रोचक और आत्मीय बनाया है। द्विवेदीजी मनुष्य के उदात्त और मानवीय पक्ष को उजागर करते हैं। भावप्रवण और हृदयस्पर्शी ढंग से वे अपनी बात रखते हैं। इससे उनकी बातें पाठक के मस्तिष्क के साथ-साथ हृदय को भी उद्वेलित करती है। निबंध के आरंभ के निम्नलिखित अंश को देखिए :

पर कोई नहीं जानता कि वे अभागे नाखून क्यों इस प्रकार बढ़ा करते हैं। काट लीजिए, वे चुपचाप दंड स्वीकार कर लेंगे, पर निर्लज्ज अपराधी की भांति फिर छूटते ही सेंध पर हाजिर। आखिर ये इतने बेहया क्यों है?

निबंध के उपर्युक्त अंश की भाषा पर गौर कीजिए। आप देखेंगे कि द्विवेदीजी ने यहां नाखून काटने और बढ़ने की प्रक्रिया का मानवीकरण कर दिया है और नाखून के लिए अभागे, निर्लज्ज, अपराधी, बेहया जैसे विशेषणों का प्रयोग करके अपनी बात को हृदयग्राही भी बना दिया है और उसमें रोचकता भी आ गयी है।

इस प्रकार द्विवेदीजी के लेखकीय व्यक्तित्व की कई विशेषताएं हमारे सामने उजागर होती है।

cks/k iz'u

5. द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की कौन-सी ऐसी विशेषता है जिससे उनकी अध्ययनशीलता का पता चलता है?
   क) पांडित्य
   ख) मानवतावाद
   ग) संवेदनशीलता
   घ) उपर्युक्त में से कोई नहीं ( )
6. पुरानी मान्यताओं के प्रति द्विवेदीजी का क्या दृष्टिकोण था?
   क) वे उन का पूर्ण समर्थन करते थे।
   ख) वे उनके कटु आलोचक थे।
   ग) वे पुराने की अपेक्षा नये को उचित मानते थे।
   घ) वे नये और पुराने को विवेकशील दृष्टि से जांचने के पक्षधर थे। ( )

vH;kl

3. द्विवेदीजी के मानवतावादी दृष्टिकोण पर पांच पंक्तियों में टिप्पणी लिखिए।
   ....
   ....
   ....
   ....
   ....

36-4 lajpuk-f'kYi

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी हिंदी के प्रमुख निबंधकार हैं। इन्होंने निबंध की एक नयी शैली विकसित की जिसे ललित निबंध कहा जाता है। द्विवेदीजी का यह निबंध इस शैली का उत्कृष्ट उदाहरण है। भाषा और शैली दोनों दृष्टियों से द्विवेदीजी के निबंध अत्यंत प्रभावशाली हैं। आइए, हम उनके इस निबंध की भाषा-शैली की विशेषताओं का अध्ययन करें।

36-4-1 Hkk"kk

'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' से स्पष्ट है कि आचार्य द्विवेदी की भाषा आचार्य शुक्ल की भाषा से भिन्न है। यद्यपि द्विवेदीजी की भाषा भी परिनिष्ठित और परिष्कृत है लेकिन उनकी भाषा की कुछ अन्य विशेषताएं भी हैं। द्विवेदीजी की शैली विवेचनापरक नहीं है। उनकी भाषा में अधिक लचीलापन है। वे विषय और प्रसंग के अनुसार अपनी भाषा को बदल देते हैं। द्विवेदीजी की भाषा के कई रूप और स्तर हमारे सामने खुलते जाते हैं। उनकी भाषा में शब्द चयन से लेकर वाक्य रचना तक एक तरह की स्वच्छंदता नजर आती है। इसका अर्थ यह नहीं है कि आचार्य द्विवेदी की भाषा में बिखराव या अर्थगत शिथिलता है। उनकी भाषा नदी की तरह प्रवाहमयी है। कभी गरजती-उफनती आगे बढ़ती है, तो कभी कल-कल करती शांति से बहती रहती है। इस निबंध के कुछ अंशों को सामने रखकर उनकी भाषा पर विचार कर सकते हैं :

> *कुछ लाख ही वर्षों की बात है, जब मनुष्य जंगली था, वनमानुष जैसा। उसे नाखून की जरूरत थी। उसकी जीवन रक्षा के लिए नाखून बहुत जरूरी थे। असल में वही उसके अस्त्र थे। दांत भी थे, पर नाखून के बाद ही उनका स्थान था।*

आप उपर्युक्त अंश की भाषा का विश्लेषण कीजिए। यहां केवल एक स्थिति का वर्णन है। लेकिन यहां भाषा का रूप अत्यंत सहज और स्वाभाविक है। छोटे-छोटे वाक्य और बोलचाल के सामान्य शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिनमें खड़ी बोली का स्वाभाविक रूप प्रकट होता है। किसी भी पाठक को उक्त बातें समझने में कोई कठिनाई नहीं होगी।

अगर आदमी अपने शरीर की, मन की और वाक् की अनायास घटने वाली वृत्तियों के विषय में विचार करे, तो उसे अपनी वास्तविक प्रवृत्ति पहचानने में बहुत सहायता मिले। पर कौन सोचता है? सोचना तो क्या उसे इतना भी पता नहीं चलता कि उसके भीतर नख बढ़ा लेने की जो सहजवृत्ति है, वह उसके पशुत्व का प्रमाण है।

इस अंश में द्विवेदीजी ने सहज वृत्ति का बौद्धिक विवेचन किया है। इसलिए आप पाएंगे कि इस अंश की भाषा ऊपर के अंश से भिन्न है। यहां वाक्य लंबे हैं। शब्द तत्सम प्रधान है। यद्यपि यहां भी लेखक ने अपनी बात प्रभावशाली ढंग में रखी है।

मनुष्य को सुख कैसे मिलेगा? बड़े-बड़े नेता कहते है, वस्तुओं की कमी है, और मशीन बैठाओ, और उत्पादन बढ़ाओ और धन की वृद्धि करो, और बाह्य उपकरणों की ताकत बढ़ाओ।

द्विवेदीजी ने यहां कहा है कि कुछ नेताओं के अनुसार भौतिक उन्नति ही सुख का साधन है। अब इस बात को एक पंक्ति में भी रखा जा सकता था। लेकिन द्विवेदीजी उसे छोटे-छोटे उपवाक्यों में प्रस्तुत करते हैं और भौतिक उन्नति के तात्पर्य को एक व्यापक रूपक में बदल देते हैं। यहां कथन का वैचारिक पक्ष ही उजागर नहीं होता बल्कि उसकी प्रस्तुति में निहित उनकी भावना भी उजागर होती है और सबसे बड़ी बात यह है कि द्विवेदीजी जो कहना चाहते हैं उसे क्लिष्ट बनने से बचाकर सहज और आत्मीयतापूर्ण बना देते हैं।

उपर्युक्त तीन उदाहरणों से हम उनकी भाषा की कुछ विशेषताओं को सामने रख सकते हैं:

- द्विवेदीजी की भाषा परिनिष्ठित है। उसमें हिंदी की स्वाभाविकता, सहजता और सरसता है।
- उनकी भाषा विषय और प्रसंग के अनुकूल परिवर्तित होती है।
- वे प्रायः छोटे और स्पष्ट अर्थ देने वाले वाक्य बनाते हैं। अपेक्षाकृत लंबे वाक्य वे वहीं इस्तेमाल करते हैं जहां कोई गंभीर विवेचन किया गया हो।
- उनकी भाषा का प्रमुख गुण है, लालित्य। इसके लिए वे भाषा को सरस, रोचक, आत्मीय और पठनीय बनाते हैं और साथ ही काव्य के उपकरणों का भी इस्तेमाल करते हैं। जैसे अलंकार, बिंब, रूपक आदि का प्रयोग। आवश्यकतानुसार मुहावरों का भी प्रयोग करते हैं। लेकिन इनसे उनका कथन दबता नहीं है बल्कि और प्रभावशाली बन जाता है।
- उनकी शब्दावली अत्यंत व्यापक है। वे तत्सम शब्दों का पर्याप्त प्रयोग करते हैं। लेकिन तद्भव, देशज और उर्दू शब्दों का प्रयोग भी धड़ल्ले से मिलता है।

अतः हम कह सकते हैं कि द्विवेदीजी ने शुक्लजी की भाषा में लालित्य का एक अतिरिक्त गुण जोड़कर उसे और अधिक समृद्ध किया है।

36-4-2 'kSyh

द्विवेदीजी के निबंधों की शैली न तो विवेचन प्रधान है और न ही भावप्रधान। वस्तुतः उनमें शैली का एक नया ही रूप मिलता है जिसे हम निबंध की ललित शैली कह सकते हैं। वे सिर्फ कथन के मंतव्य को ही उजागर करना पर्याप्त नहीं समझते, बल्कि अपनी बात को इस ढंग से कहना चाहते हैं कि उसका सौंदर्य भी सबको प्रभावित करे। वे ''क्या कहा है'' के साथ-साथ ''कैसे कहा है'' को भी ध्यान में रखते हैं। यही कारण है कि वे निबंध को कभी वैचारिक गूढ़ता से बोझिल नहीं होने देते और न ही पाठकों को भावनाओं की दरिया में बहाते जाते हैं कि वे अपनी सुध-बुध ही खो बैठे। वे बात को गूढ़ चिंतन शैली में पेश करने की बजाय अनुभूतिपरक बना देते हैं, ताकि सामान्य से सामान्य पाठक भी अनभूति के स्तर पर उससे जुड़ सके। जैसे, नाखून क्यों बढ़ते हैं, यह सामान्य पाठक के लिए भी कोई ऐसा प्रश्न नहीं है जिसे वह न समझ सके। लेकिन विश्वशांति की आवश्यता पर कोई बौद्धिक निबंध लिखा जाता, तो हो सकता है पाठक उससे इतनी अंतरंगता महसूस नहीं करता।

द्विवेदीजी की शैली की दूसरी विशेषता यह है कि वह अपने कथ्य को एक धारा में बांधे नहीं रखते बल्कि आवश्यकता के अनुसार बदलते रहते हैं। अगर जरूरत हुई तो किसी ग्रंथ की कोई

गूढ़ बात उद्धृत कर दी और जरूरत हुई तो प्रकृति और जीवन से संबंधित कोई बात कह दी। यह भी आवश्यक नहीं है कि वे अपने निबंध को किसी खास विषय तक ही सीमित रखें। मूल कथ्य के साथ-साथ अगर कोई अन्य बात उभर आती है तो उसे भी अत्यंत रोचक ढंग से प्रस्तुत कर देते हैं। जैसे निबंध के आरंभ में अस्त्र-शस्त्रों के विकास की कहानी कहते हुए वे प्राचीन भारतीय इतिहास पर भी टिप्पणी कर देते हैं। आर्यों की जीत इसलिए हुई कि उनके पास घोड़े थे, लोहे के अस्त्र थे। इसी प्रकार नाखूनों की चर्चा के दौरान वे 'कामसूत्र' के हवाले से दो हजार साल पहले नाखून संवारने की भिन्न-भिन्न कलाओं का परिचय देने लगते हैं या कालिदास के हवाले से नये-पुराने पर टिप्पणी करते हैं। इस तरह के प्रसंगों से उनके निबंध की एकरसता भी समाप्त होती है और पाठक को भी कई नयी जानकारियां प्राप्त होती हैं।

द्विवेदीजी के निबंध की तीसरी विशेषता यह है कि अपनी बात को सरस ढंग से कहने के अभ्यासी हैं। इसके लिए वे या तो रोचक प्रसंगों का चयन करते हैं या फिर अपनी बात को सरस रूप देते हैं। उदाहरण के लिए, नये-पुराने वाले प्रसंग को देखिए। वे पुराने से चिपके रहने को उस बंदरिया की उपमा देते हैं जो अपने मरे बच्चे को गोद में चिपकाए रहती है। इस उदाहरण से उनकी बात अधिक रोचक बनकर सामने आती है। साथ ही वे रूढ़िवादिता पर प्रहार भी कर देते हैं। वे गंभीर विवेचन के समय भी कुछ ऐसे शब्द अपनी बात में डाल देते हैं जिससे बात की गंभीरता भी बनी रहती है और वह अधिक सहज और सरस भी हो जाती है। इस वाक्य को देखिए:

> *''इसलिए मनुष्य >xM+s-VaVs को अपना आदर्श नहीं मानता, गुस्से में आकर p<+-nkSM+us वाले अविवेकी को बुरा समझता है।*

उपर्युक्त वाक्य में द्विवेदीजी ने अत्यंत महत्त्वपूर्ण बात कही है। लेकिन ''झगड़े-टंटे'' और ''चढ-दौड़ने वाले'' प्रयोग, वाक्य को अधिक सहज और कथ्य को अधिक सरस बना देते हैं। इसी तरह गांधीजी का सीधा नाम लेने की बजाय उन्हें, 'बूढ़ा', कहने से गांधीजी के प्रति लेखक की गहरी श्रद्धा और आस्था भी प्रकट होती है, और दूसरों की उनके प्रति उपेक्षा का भाव भी।

अतः शैली की दृष्टि से इस निबंध को हम ललित निबंध कह सकते हैं क्योंकि तथ्य के पूर्ण सौंदर्य को इसमें उजागर किया गया है।

36-5 izfrik|

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के इस निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' का प्रतिपाद्य क्या है, अब तक के विश्लेषण से आप समझ गये होंगे। आपको मालूम होगा कि लगभग छह वर्षों तक दूसरा विश्वयुद्ध चलता रहा था। इस युद्ध में पूरा यूरोप, एशिया के कई देश, अमरीका आदि शामिल थे। इस में करोड़ों लोग मारे गये थे। हजारों शहर तबाह हो गये थे। युद्ध के आखिरी चरण में अमरीका ने जापान के दो शहरों पर एटम बम का प्रयोग किया था, जिनके कारण वे दोनों शहर पूरी तरह नष्ट हो गये। यद्यपि 1945 में विश्व युद्ध समाप्त हो गया लेकिन दुनिया से युद्ध का खतरा समाप्त नहीं हुआ। इसके विपरीत दूसरे विश्व युद्ध के बाद दुनिया दो खेमों में बंट गई। एक का नेता अमरीका था और दूसरे का सोवियत संघ। दोनों ओर से जोर-शोर से युद्ध की तैयारियां होने लगी। नये-नये अस्त्र-शस्त्रों का निर्माण होने लगा। इसने तीसरे विश्वयुद्ध का खतरा उत्पन्न कर दिया। ऐसे में विश्व की शांतिकामी जनता ने युद्ध की तैयारियों के विरूद्ध आवाज उठाई। विध्वंसक हथियारों पर रोक लगाने की मांग होने लगी। शांति के पक्ष में उठी इस आवाज का समर्थन लेखकों, कलाकारों, बुद्धिजीवियों ने भी किया। लेखकों ने कविता, कहानी, उपन्यास, निबंध आदि लिखकर युद्ध के विरोध में और शांति के पक्ष में प्रचार किया। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी का यह निबंध इसी शांति अभियान का एक अंग है और इसका उद्देश्य विश्वशांति की आवश्यकता को प्रतिपादित करना है।

युद्ध का खतरा और मानव जाति के विनाश का भय आज पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गया है और इस दृष्टि से निबंध की प्रासंगिकता और महत्त्व और भी बढ़ जाता है। लेकिन द्विवेदीजी ने इस प्रश्न को व्यापक मानवीय संदर्भ में प्रस्तुत किया है। द्विवेदीजी ने इस प्रश्न को केवल हथियारों के उत्पादन तक सीमित नहीं रखा है बल्कि उसे मनुष्यत्व और पशुत्व से जोड़कर इसके नैतिक पक्ष को भी उजागर किया है।

fgnh fuc/k vkj vU; x| fo/kk,¡

द्विवेदीजी ने अपने मत के समर्थन में महात्मा गांधी के आदर्शों को प्रस्तुत किया है। हम सभी जानते हैं कि महात्मा गांधी ने सत्य और अहिंसा का आदर्श रखा था और ब्रिटिश दासता के विरुद्ध संघर्ष में भी उन्होंने सत्य और अहिंसा का मार्ग नहीं छोड़ा था। इसी तरह उन्होंने प्रेम, तपस्या और त्याग द्वारा विरोधी के हृदय-परिवर्तन की बात कही थी। द्विवेदीजी, गांधीजी के इन मानवीय आदर्शों से अत्यंत प्रभावित थे और उन्होंने अपने इस निबंध में उन्हीं आदर्शों को मनुष्यत्व की पहचान के रूप में स्थापित किया है।

द्विवेदीजी का विचार है कि पशुता मनुष्य की एक ऐसी प्रकृति है जो उसके बर्बर युग का अवशेष कही जा सकती है। सभ्यता के विकास के साथ मनुष्य ने कुछ मानवीय गुणों का विकास भी किया है। प्रेम, श्रद्धा, त्याग, तपस्या, संवेदना आदि ऐसे ही मानवीय गुण है लेकिन इन्हें मनुष्य तभी अपना सकता है जब वह स्व के बंधन को स्वीकार करे। 'स्व' का अर्थ है मुनष्य के वे सामान्य गुण जिससे वह पशु से अलग अपनी पहचान बनाता है।

द्विवेदीजी ने भारतीय संस्कृति की एक ऐसी विशेषता को भी हमारे सामने रखा है जिसे प्रायः भुला दिया जाता है। ''स्व का बंधन'' ऐसी ही विशेषता है। आत्मानुशासन के द्वारा मनुष्य हिंसा, क्रोध, घृणा आदि से छुटकारा पा सकता है।

इस प्रकार द्विवेदीजी का यह निबंध विश्वशांति का संदेश देने के साथ-साथ पशुता और मनुष्यता के अंतर को भी उजागर करता है और हमें बताता है कि मनुष्य होने के नाते हमारे लिए क्या श्रेयष्कर है, नाखून को बढ़ने देना या नाखून को बढ़ने न देना।

'kh"kd dh mi;qDrrk % 'स्वर्ग में विचारसभा का अधिवेशन' की तरह द्विवेदीजी के इस निबंध का शीर्षक विषय का सीधा प्रतिपादन नहीं करता। केवल 'नाखून क्यों बढ़ते हैं?' पढ़ने से हम अनुमान नहीं लगा सकते कि इस निबंध का वास्तविक विषय क्या है। वस्तुतः निबंध का शीर्षक व्यंजनापूर्ण है। निबंध में नाखून क्यों बढ़ते हैं, इसकी चर्चा तो है ही, इसके साथ-साथ और इससे कहीं ज्यादा महत्त्वपूर्ण विषय है, मनुष्य की पशुता का बढ़ना। इस निबंध का वास्तविक विषय यही है कि इस अर्थ में नाखून पशुता का प्रतीक बनकर इस निबंध में प्रस्तुत हुआ है। द्विवेदीजी की शैली की यह विशेषता है कि इन दोनों को इस तरह एक साथ जोड़कर उन्होंने प्रस्तुत किया है कि पाठक को निबंध के वास्तविक मंतव्य तक पहुंचने में कोई कठिनाई नहीं आती।

vH;kl

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए और उत्तर इकाई के अंत में दिये गये उत्तरों से मिलाइए।

4. इस निबंध के आधार पर द्विवेदीजी के शब्द चयन पर अपने विचार पांच पंक्तियों में लिखिए?

.....

.....

.....

.....

.....

5. इस निबंध को ललित निबंध क्यों कहा गया है? पांच पंक्तियों में समझाइए?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

6. द्विवेदीजी ने किस उद्देश्य से प्रेरित होकर यह निबंध लिखा है। पांच पंक्तियों में समझाइए?

.....

.....

.....

.....

.....

7. द्विवेदीजी महात्मा गांधी ने किन आदर्शों से प्रभावित थे? पांच पंक्तियों में समझाइए?

....
....
....
....
....

8. निम्नलिखित अंश के आधार पर द्विवेदी की भाषा की कोई दो विशेषताएं बताइए। उत्तर चार पंक्तियों से अधिक न हो।

लेकिन प्रकृति है कि अब भी नाखून को जिलाए जा रही है और मनुष्य है कि अब भी उसे काटे जा रहा है। वे कंबखत रोज बढ़ते हैं, क्योंकि वे अंधे हैं, नहीं जानते कि मनुष्य को इससे कोटि-कोटि गुना शक्तिशाली अस्त्र मिल चुका है।

....
....
....
....

9. निबंध की प्रासंगिकता पर अपने विचार लिखिए।

....
....
....
....

36-6 lkjka'k

- आपने इकाई 35 के अंतर्गत आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के निबंध 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' की विशेषताओं का अध्ययन किया है। यह निबंध मनुष्य की हिंसक मनोवृत्ति पर केंद्रित है जिसके कारण वह मारक अस्त्र-शस्त्रों का ढेर लगा रहा है। इस निबंध में द्विवेदीजी हमारी भावनाओं को उद्वेलित करते हैं, साथ ही हमारे विचारों को भी। इस दृष्टि से इस निबंध में भाव और विचार दोनों का संयोजन है। आप अब इसके भावपक्ष और विचारपक्ष की विवेचना कर सकते हैं।
- द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की प्रमुख विशेषताएं हैं; मानवतावाद, पांडित्य, गहन चिंतन, संवेदनशीलता और सौंदर्य दृष्टि। अब आप निबंध में द्विवेदीजी के व्यक्तित्व की इन विशेषताओं को पहचान सकते हैं।
- इस निबंध की भाषा सहज स्वाभाविक, सरस, रोचक और भावप्रवण है। इनकी भाषा में हिंदी का अपना सौंदर्य व्यक्त हुआ है। इसमें जटिल विचारों और गहन अनुभूतियों को प्रभावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत करने की क्षमता है। आप स्वयं इस निबंध की भाषा की विशेषताओं का वर्णन कर सकते हैं।
- यह ललित निबंध है। इसमें शैली का अनुपम सौंदर्य है। निबंध के विचार और भाव अत्यंत सरस, रोचक और आत्मीय ढंग से व्यक्त हुए हैं। अब आप स्वयं शैली की इन विशेषताओं का विवेचन कर सकते हैं।
- इस निबंध का मुख्य विषय विश्वशांति का प्रसार करना है। लेकिन इसके माध्यम से लेखक ने मनुष्य की आंतरिक पशुता और सामान्य मानवधर्म पर भी विचार किया है। आप स्वयं निबंध के प्रतिपाद्य का विवेचन कर सकते हैं।
- आप निबंध के शीर्षक की उपयुक्तता को भी समझा सकते हैं।

36-7 'kCnkoyh

vifjgk;Z % जिसका परिहार न हो सके, अनिवार्य।

ukxklkdh % जापान का एक शहर, जिस पर अमेरिका द्वारा 9 अगस्त, 1945 को एटम बम डाला गया था।

iqjkruiaFkh % पुरातन का अर्थ है, पुराना। वह जो प्राचीन रूढ़ियों को अच्छा समझता हो और नये का आंख मूंदकर विरोध करता हो।

efgek eMu % महिमा अर्थात बड़प्पन; महिमा मंडन अर्थात बड़प्पन से युक्त करना।
ekuohdj.k % एक अलंकार जिसमें निर्जीव वस्तु, विचार या भाव को मानवीय रूप में प्रस्तुत किया जाता है।
LoPNnrk % अपनी इच्छा के अनुसार विचरण करना।
ufrd % जो नीति के अनुकूल हो अर्थात लोक व्यवहार के उपयुक्त आचरण।
vkRekuq'kklu % अपने आप का अपने आप पर नियंत्रण।

36-8 ck/k i'uk@vH;klk d mÙkj

ck/k i'u

1. क) √ ख) × ग) √ घ) √ ङ) ×
2. ग)
3. ख)
4. 1) अपने आप पर, अपने आप के नियंत्रण को ''स्व का बंधन'' कहते हैं।
   2) वे वृत्तियों जो अभ्यासजन्य हैं, जिन्हें न तो सीखना होता है और न जिसके लिए प्रयास करना पड़ता है। जैसे नाखून का बढ़ना, पलकों का गिरना, आदि।
   3) आहार, निद्रा, भय और मैथुन मनुष्य और पशु में समान है।
   4) मानव-जाति को विनाश से बचाने के लिए यह आवश्यक है।
5. क)
6. घ)

vH;kl

1. देखिए भाग 36.2
2. उपभाग 36.2.2 पढ़िए और अपना उत्तर स्वयं लिखिए।
3. देखिए भाग 36.3
4. देखिए उपभाग 36.4.1
5. देखिए उपभाग 36.4.2
6. देखिए भाग 36.5
7. देखिए भाग 36.5
8. द्विवेदीजी ने यहां भाषा को भावप्रवण बनाया है। नाखून का मानवीकरण करके और उसे ''कंबख्त'' और ''अंधा'' कहकर उन्होंने बात में आत्मीयता भी उत्पन्न कर दी है। द्विवेदीजी कठिन भाषा और सामान्य बोलचाल की भाषा दोनों में सिद्धहस्त हैं। लेकिन वे अपनी बात को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से कहने में सफल रहे हैं।
9. द्विवेदीजी ने यह निबंध छठे दशक के आरंभ में लिखा था, उस समय जिस तरह के हथियार दुनिया में मौजूद थे, उससे कई हजार गुना अधिक खतरनाक और संख्या में भी कई गुना अधिक हथियार आज दुनिया में मौजूद हैं। एक छोटी-सी चिंगारी सारी दुनिया को कुछ मिनटों में नष्ट कर सकती है। मालूम नहीं कब मनुष्य की पशुता जाग उठे और दुनिया को राख के ढेर में बदलता हुआ देखने के लिए भी कोई न बचे। ऐसी स्थिति में यह और भी जरूरी है कि मनुष्य अपने अंदर की पशुता पर विजय प्राप्त करे और अपने मनुष्यत्व को पहचाने।